पेरिस
दिसम्बर २१, २००६

सन्देश संख्या ११०

दक्षिण अफ्रीका स्थित एक जर्मन भक्त को पत्र

प्रिय हीके जी,

लम्बे समय से आपके संवाद की प्रतीक्षा थी जो अन्ततः १३ दिसम्बर २००६ को मिला । यद्यपि संवाद देर से प्राप्त हुआ, फिर भी अच्छा लगा । एक वर्ष से भी अधिक समय से मेरा यह शरीर भयानक स्याटिका–दर्द से गुजर रहा है । यह दर्द दाहिने नितम्ब के मध्य से शुरू होकर नीचे पूरे पैर तक होता है । चलना और यहाँ तक कि थोड़े समय के लिए खड़ा होना भी कठिन हो गया था । कई प्रकार के उपचार किए गए । कई प्रकार की चिकित्सा–पद्धति और रोग–निवारण के उपाय किए गए परन्तु कोई परिणाम नहीं निकला । किन्तु सम्पूर्ण विश्व में लोगों से मिलने का कार्यक्रम और उनके साथ प्राचीन मानवीय प्रज्ञा के साझा करने का कार्यक्रम अनवरत चलता रहा । कष्ट था किन्तु कष्ट का कोई भोक्ता नहीं था । स्मृति में दर्द का तथ्यात्मक पंजीकरण तो था किन्तु चुनावों, वर्गीकरणों एवं विभाजनों से युक्त मानसिक–पंजीकरण नहीं था । आराम करने या ठीक होने की इच्छा का अभाव था और इसीलिए कष्ट बहुत अधिक तबाही और गड़बड़ी नहीं ला सका । आपको कोई भी हरा नहीं सकता यदि आप किसी को जीतने की इच्छा नहीं रखते हों । अन्ततः शल्यचिकित्सा विशेषज्ञों के हस्तक्षेप से आराम मिला ।

आपको खुश करने के किसी के ''१००० वादों'' से भी आप आकर्षित नहीं होते जबतक आप स्वयं के बारे में एक अच्छी छवि (मिथ्याभिमान) नहीं रखते कि आप दूसरों को खुश कर सकते हैं और यह कि आप इस ग्रह के एक चुने हुए सच्चे देवदूत हैं । इसी तरह ''सूक्ष्म'' एवं ''परोपकारी'' अहंकार व्यक्ति को ''रोग दूर करने का दावा करने वाला'' बना देता है जो मूर्खतापूर्ण अनुमानों, मान्यताओं, महत्वाकांक्षाओं, पीड़ा एवं उत्तेजना में स्थित तथा द्वन्द्व एवं दुविधाग्रस्त मन की माँगों के अनुरूप उत्पन्न बाजार में विभिन्न प्रकार के काल्पनिक एवं आकषक 'रोग–निवारक' विधियों को बाँटते हैं । कोई भी व्यक्ति दूसरे को स्वस्थ नहीं कर सकता । स्वास्थ्य व्यक्ति के अन्दर प्रस्फुटित होता है और तब परमपवित्र से उसका सम्बन्ध विभेदकारी चित्तवृत्ति के धोखा और पाखण्ड से मुक्त रहता है। ईश्वर को धन्यवाद है कि मोया ने बुद्धि की बात सुनी और अपने शिक्षण की जीवन–वृत्ति को जारी रखा ।

इच्छा और क्रोध (या कृत्रिम विनम्रता) साथ–साथ चलते हैं । क्षुद्र मन में केवल दो व्यक्तित्वों का खण्ड समाहित नहीं होता बल्कि उसमें अनेक खण्ड होते हैं । अतः उसमें और विखण्डन या संयोजन का कोई अर्थ नहीं है । तब मानसिक गड़बड़ी स्वाभाविक प्रक्रिया के रूप में घटित होती है और अवसाद ''मैं'' को छुपाने का तरीका होता है । ''मैं'' स्वयं को बचाये रखने हेतु सदैव भूतकाल में रहता है । ''मेरा विचार'' कुछ होता ही नहीं क्योंकि ''मैं'' ही विचार है और विचार ही ''मैं'' है । उस अवस्था में, स्मृतियाँ केवल अपूर्ण मानसिक अनुभव, मानसिक अवशेष एवं अवसाद होती हैं । आप अपने अहंकार को अलग नहीं कर सकते क्योंकि ''अलग करने वाला'' अहंकार का ही नया रूप है ।

मस्तिष्क में अद्‌भुत एवं असीम ऊर्जा है किन्तु दुर्भाग्यवश यह ऊर्जा सुख की आकांक्षा में, असुरक्षा के भय में, अपना व्यक्तिगत महत्व दिखाने में, अन्य लोगों के साथ भयंकर विवादों में फँसकर दुःखभोग में और अन्त में, मृत्यु में न हो रही है । क्या मस्तिष्क में मौलिक रूपान्तरण सम्भव है? क्या यह मूढ़ विभेदकारी चित्तवृत्ति मूल रूप से रूपान्तरित हो सकती है ? हाँ, यह बिना समयान्तराल के हस्तक्षेप के तथा विद्युत तड़ित के झटके जैसी ऊर्जा से तत्क्षण रूपान्तरित हो सकती है । यदि इस मानसिक रूपान्तरण में समय लगता होता तब इस रूपान्तरण हेतु कम्प्यूटर का उपयोग किया जाता । और तब विभिन्न प्रकार के वस्त्र एवं उपाधि धारण करने वाले आध्यात्मिक बाजार के पाखण्डियों की तुलना में कम्प्यूटर यह काम बहुत तेजी से करता । वस्तुतः कम्प्यूटर वैसे क्षेत्र में अनुपयोगी है जहाँ कर्त्ता और कर्म के मध्य का द्वैत वास्तविक नहीं है, जहाँ समयान्तराल और उसकी माप मिथक है । उसी तरह तुम्हारे रूपान्तरण के लिए समस्त गुरू, अवतार, पैगम्बर, बाबाजी, माताजी एवं चमत्कार–दिखाने वाले भी अनुपयोगी हैं यद्यपि वे तुम्हें तुम्हारी अदम्य इच्छाओं में फँसायें रहते हैं और वे इच्छायें ही मानसिक ''दर्शन'' तथा ''अनुभव'' को जन्म देती हैं। अपने जीवन को समझदारी की ऊर्जा में रखकर तथा भूतकाल के पूर्वाग्रहों एवं मानसिक आपाधापी के प्रदूषण से मुक्त रह कर इन सभी बातों को ध्यानपूर्वक सुनो ताकि इनका प्रत्यक्ष और तत्काल प्रभाव हो ।

विचार व्यक्ति के प्रत्येक कार्य को विलम्बित करता है, उसे दीर्घसूत्रता प्रदान करता है और तथाकथित आदर्शों तथा समय के व्यामोह में उसका पतन करता है । यह मौलिक रूपान्तरण के नाम पर परिमार्जित निरन्तरता के साथ केवल पूर्व–स्थिति बनाये रखने का प्रयास करता है । विचार और समय तकनीकी रूपान्तरण ला सकते हैं जैसे कि नदी पर पुल निर्माण या गृह निर्माण में ये उपयोगी हैं । ये वहीं उपयोगी हैं जहाँ कर्त्ता और कम का द्वैत यथार्थ है किन्तु ये चित्त मेंरूपान्तरण नहीं ला सकते क्योंकि वहाँ द्वैत मिथ्या है । समय और विचार से मुक्ति ही मौलिक रूपान्तरण है । उसके बाद, सद्‌गुण का अर्थ समाज में प्रतिष्ठा या सम्मान पाना नहीं होता, इसका अर्थ अच्छी आदत या ''नैतिक'' व्यवहार भी नहीं होता । इसका कोई आदर्श नहीं होता, इसकी कोई सीमा नहीं होती । यह सद्‌गुण अपने भय या लोभी समाज के निहित स्वार्थों से उत्पन्न आदर्शों का समूह भी नहीं होता । वस्तुतः तब सद्‌गुण संकट बन जाता है क्योंकि यह रूपान्तरण समाज के दब्बूपना की स्वीकृति नहीं है । विभेदकारी चित्तवृत्ति का पूर्ण विनाश ही तब प्रेम होता है । जीवन तब अर्थशास्त्रियों, राजनीतिज्ञों और पुरोहितों द्वारा निर्धारित गंभीर आर्थिक या सामाजिक षड्‌यन्त्र का नाम नहीं होता। ये चालाक लोग होते हैं जो परिवर्तन के नाम शोषण हेतु नई संरचना का निर्माण करते हैं । परिवर्तन व्यक्ति के अन्दर घटित होना होगा । आप जनसाधारण को असाधारण क्षमता प्राप्त है और अनावृत्त होने के लिए वह आपकी प्रतीक्षा कर रही है ताकि मस्तिष्क में मौलिक रूपान्तरण घटित हो सके ।

।। जय मौलिक रूपान्तरण ।।